तप जीवन का श्रृंगार

प्रो. (डॉ.) सोहन राज तातेड़,

पूर्व कुलपति सिंघानिया विश्वविद्यालय, राजस्थान

तप मानव जीवन का श्रृंगार है। चारित्र भी जीवन का श्रृंगार है। मानव जीवन का श्रृंगार आभूषण नहीं है। आभूषण केवल बाहरी चमक–दमक है। यह बाहरी श्रृंगार है। जीवन को उत्कर्ष पर पहुंचाने वाला आभ्यन्तर श्रृंगार है। सादा जीवन उच्च विचार मानव जीवन का श्रृंगार यह कहावत तप को ही ध्यान में रखकर कही गयी है। तपस्या को साधना का अपरिहार्य अंग माना गया है। तपस्या का अर्थ काय–क्लेश या उपवास ही नहीं है, बल्कि स्वाध्याय, ध्यान, विनय आदि सब तपस्या के विभाग हैं। तपस्या मोक्ष का मार्ग है, उससे तपस्वी मोक्ष की ओर गति करता है। प्रत्येक संसारी जीव प्रतिक्षण कुछ न कुछ प्रवृत्ति सदैव करता है। जब उसकी प्रवृत्ति रुक जाती है तब वह मुक्त हो जाता है। जहां प्रवृत्ति है, वहां कर्म पुद्गलों का आकर्षण और निर्जरण होता है। प्रवृत्ति दो प्रकार की होती है– शुभ और अशुभ। शुभ प्रवृत्ति से अशुभ कर्मों का निर्जरण और शुभकर्म का बन्ध होता है। अशुभ प्रवृत्ति से अशुभ कर्मों का बन्ध होता है। ज्ञान, दर्शन, चारित्र और तप से संयम होता है तथा इसका समागम होने पर जीव को मोक्ष मिलता है। आत्मा ज्ञान से जीवादि भावों को जानता है, दर्शन से उसका श्रद्धान करता है, चारित्र से कर्मास्रव का निरोध करता है और तप से विशुद्ध होता है। सर्व दुःखों से मुक्त होने के लिए तपस्वी संयम और तप से पूर्वकर्मों का क्षय करके मुक्ति प्राप्त करते हैं। तप कर्मों की निर्जरा और आत्मविशुद्धि का सर्वोत्कृष्ट साधन है। जो ज्ञानावरणादि आठ प्रकार की कर्म ग्रन्थि को तपाता है, जलाता है, नाश करता है, वह तप है। वासना या इच्छा का निरोध करना भी तप कहलाता है। बाह्य या आभ्यन्तर जितने भी तप हैं उनका आचरण इह लौकिक तथा पारलौकिक नामना, कामना या वासना से रहित होकर केवल निर्जरा की दृष्टि से करना ही धर्म है। जैसे अग्नि हवा के द्वारा तृण और काष्ठादि को जलाती है वैसे ही ज्ञानरूपी हवा से युक्त शील, समाधि और संयम से प्रज्वलित तप रूपी अग्नि संसार रूपी बीज को जलाती है। तपस्या को आत्मशुद्धि का साधन और कर्मों की निर्जरा का हेतु बताया गया है। मुक्ति व शान्ति प्राप्त करने में तप की महती भूमिका होती है। तप के मुख्य

दो भेद हैं– बाह्य और आभ्यन्तर। बाह्य तप अध्ययन आदि कारणों से बाह्य तप कहलाता है। इसमें बाहरी द्रव्यों की अपेक्षा होती है, अशन, पान आदि द्रव्यों का त्याग होता है। ये सर्वसाधारण के द्वारा तपस्या के रूप में स्वीकृत होते हैं। इनका प्रत्यक्ष प्रभाव शरीर पर अधिक होता है। ये मुक्ति के बहिरंग कारण होते हैं। जिसके आचारण से मन दुष्कृत के प्रति प्रवृत्त न हो, आन्तरिक तप के प्रति श्रद्धा उत्पन्न हो और पूर्व गृहीत योगों–स्वाध्याय आदि योगों या व्रत विशेषों की हानि न हो, वह बाह्य तप है। बाह्य तप के द्वारा मानव अपने तन और मन को सहिष्णु बना लेता है। बाह्यतप से सुख शीलता छूट जाती है क्योंकि सुखशीलता राग को उत्पन्न करती है। राग–राग को बढ़ाता है और कर्मबन्ध के कारण दोषों को लाता है। उसको छोड़ने का उपाय है शरीर को कृश करना। इसलिये बाह्य तप किया जाता है। अनशन, अवमौदर्य, भिक्षाचर्या या वृत्ति संक्षेप, रस–परित्याग, काय क्लेश, प्रतिसंलीनता अथवा विविक्त शयनासन बाह्य तप हैं। अनशन का अर्थ है– आहार त्याग। चतुर्विध या त्रिविध आहार का एक दिन, अधिक दिन या जीवनभर के लिए त्याग करना अनशन तप कहलाता है। अनशन का प्रयोजन है– संयम प्राप्ति, राग नाश, कर्ममल विशोधन, सद्ध्यान की प्राप्ति और शास्त्राभ्यास। अवमौदर्य का प्रचलित नाम 'ऊनोदरी' है। इसका अर्थ है उदर में भूख से कम आहार डालना। भाव यह है कि उपकरण, वस्त्र या भक्तपान की आवश्यकमात्रा में कमी करना। भिक्षाचर्या तप केवल साधु साध्वियों के लिये है, गृहस्थों के लिए इसका औचित्य नहीं है। रस विसर्जन या रस परित्याग बाह्य तप का चतुर्थ प्रकार है। दूध, दही, घी आदि स्निग्ध एवं पौष्टिक, पान, भोजन तथा रसों का त्याग करना रसपरित्याग तप है। कायक्लेश के अन्तर्गत आसन आदि करना तथा शरीर के ममत्व का परिहार करना समाहित है। संसाराभिमुख आत्मा को विषय कषाय से हटाकर अन्तर्मुखी बनाना और उसके लिये प्रबल प्रयास करना प्रतिसंलीनता तप है। जिनमें बाह्य द्रव्यों की अपेक्षा न रहे, जो अन्तःकरण के व्यापार से होते हैं, जिनमें अन्तरंग परिणामों की मुख्यता रहती है, जो स्वसंवेद्य हों, जिनसे मन का नियमन होता हो, जो विशिष्ट व्यक्तियों के द्वारा तप रूप में स्वीकृत होते हों और जो मुक्ति के अन्तरंग कारण हों, वे आभ्यन्तर तप हैं। आभ्यन्तर तप प्रधान है। आभ्यन्तर तप शुभ और शुद्ध परिणामों से युक्त होता है। इसके बिना अकेला बाह्यतप पूर्ण कर्म निर्जरा करने में

असमर्थ है। आभ्यन्तर तप के छह भेद हैं– प्रायश्चित्त, विनय, वैयावृत्य, स्वाध्याय, ध्यान और उत्सर्ग। आभ्यन्तर तप के भेदों का विवेचन क्रमशः इस प्रकार है– प्रायश्चित्त का अर्थ है पाप का विशोधन करना। खड़ा होना, हाथ जोड़ना, आसन देना, गुरुजनों की भक्ति करना तथा भावपूर्वक शुश्रुषा करना विनय तप कहा गया है। जो उपसर्ग पीड़ित हो तथा वृद्धावस्था के कारण जिनकी काया क्षीण हो गयी हो, उनकी निरपेक्ष होकर सेवा करना वैयावृत्य तप है। अपनी आत्मा का, अध्ययन करना स्वाध्याय है। एक विषय में चिन्तन को स्थिर करना ध्यान है। शयन, आसन और शरीर का त्याग करना व्युत्सर्ग तप है। इस प्रकार तप से जीवन निर्मल हो जाता है। इसीलिए तप को जीवन का श्रृंगार कहा गया है। तप से आन्तरिक कषाय दूर होते है और शरीर स्वस्थ रहता है।